RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल-011/2015-17

ओ३म्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्ष: 74, अंक : 37 एक प्रति 2 : रुपये
रविवार 3 दिसम्बर , 2017
विक्रमी सम्वत् 2074, सृष्टि सम्वत् 1960853118
दयानन्दाब्द : 194 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये
आजीवन शुल्क : 1000 रुपये
दूरभाष : 0181-2292926, 5062726
E-mail: apspunjab2010@gmail.com,
www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष–74, अंक : 37, 30 नवम्बर-3 दिसम्बर 2017 तदनुसार 18 मार्गशीर्ष सम्वत् 2074 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

माताएँ सन्तान के ज्ञान–कर्म–वस्त्र का विस्तार करें

ले०-स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

वि तन्वते धियो अस्मा अपांसि वस्त्रा पुत्राय मातरो वयन्ति।
उपप्रक्षे वृष्णो मोदमाना दिवस्पथा वध्वो यन्त्यच्छ।।

-ऋ० ५।४७।६

शब्दार्थ- मातरः = माताएँ **अस्मै** = इस पुत्र के लिए **धियः** = बुद्धियों तथा **अपांसि** = कर्मों को **वि+तन्वते** = विस्तृत करती हैं और **पुत्राय** = सन्तान के लिए **वस्त्रा** = वस्त्र **वयन्ति** = बुनती हैं। **वधवः** = वधुएँ **मोदमानाः** = प्रसन्न होती हुई **उपप्रक्षे** = सम्पर्क के निमित्त **दिवः+पथा** = ज्ञान के मार्ग से **वृषणः** = वीर्य-सेचन-समर्थ पुरुषों को **अच्छ** = भली-भाँति **यन्ति** = प्राप्त होती हैं। अथवा **वध्वः** = वधुएँ **उपप्रक्षे** = सम्बन्ध के निमित्ति **मोदमानाः** = आनन्द मनाती हुई **वृषणः** = वीर्यवान् पुरुषों को **दिवः** = चाहती हुई **पथा** = धर्ममार्ग से **अच्छ+यन्ति** = ठीक प्रकार प्राप्त होती हैं।

व्याख्या-सन्तान जो कुछ है वह प्रायः माता के आचार-विचार, व्यवहार-आहार तथा संस्कार का प्रतिबिम्ब है। माता-पिता के आचार-विचार का संस्कार बालक पर अवश्य पड़ता है और उनमें से भी माता का प्रभाव बहुत अधिक होता है। माता चाहे तो बालक को शूरवीर, धीर-गम्भीर, धर्मात्मा-महात्मा, विद्वान्-पण्डित, ज्ञानी-ध्यानी बना दे। माता चाहे, तो उसे कायर, भीरु, विक्षिप्त, चञ्चल, पापात्मा, दुरात्मा, मूढ़, अज्ञ, विषयी, लम्पट बना दे। बालक का जीवनप्रभात माता की गोद में बीतता है। माता की एक-एक इङ्गित, चेष्टा, भाषण, गमन, आसन-सभी उस बालक के लिए अनुकरणीय होते हैं। उनको देखकर, असमर्थ होता हुआ भी बालक उनका अनुकरण करता है। दूसरे शब्दों में कहें तो यह कहना होगा कि बालक की प्रवृत्ति को माता ही बनाती है। वेद कहता है-**'वितन्वते धियो अस्मा अपांसि..... मातरः'** = माताएँ अपनी सन्तान के लिए बुद्धियों तथा कर्मों का विस्तार करती हैं।

माता का उत्तरदायित्व बहुत है। माताएँ सन्तान-सम्बन्धी अपने इस उत्तरदायित्व को समझ जाएँ, तो संसार का सङ्कट दूर हो जाए। माताएँ क्षुद्र कौटुम्बिक वा दैशिक दुर्भावनाओं से ऊपर उठकर समस्त संसार को अपना घर समझकर विशाल मानव-समाज की कमनीय कल्याण-कामना से प्रेरित होकर अपना विचार, उच्चार तथा आचार ऐसा बनाएँ कि बालकों के हृदय में **वसुधैव कुटुम्बकम्** की भव्य भावना उत्पन्न हुए बिना न रहे। तब अवश्यमेव संसार से अशान्ति का निर्वसन होकर शान्ति का साम्राज्य होगा। माताओं का एक और कार्य भी यहाँ बताया गया है-**'वस्त्रा पुत्राय मातरो वयन्ति'** = सन्तान के लिए वस्त्र माताएँ बुनती हैं। यदि यह कार्य भी माताएँ सँभाल लें, तो गृहशिल्प की उन्नति होकर व्यापारिक स्पर्धा भी संसार में न्यून हो जाए। मन्त्र के उत्तरार्ध में विवाहाभिलाषिणी स्त्रियों के मनोभावों का संक्षेप में वर्णन है, उसमें इशारे से पुरुष में पुरुषत्व के होने की आवश्यकता भी बतला दी। स्त्री क्यों और कैसे पुरुष को चाहती है, इसको 'उपप्रक्षे' तथा 'वृषणः' दो पद स्पष्ट कर रहे हैं। स्त्री सोच-समझकर पति को चुने, वह उसको **'दिवस्पथा'** ज्ञान के मार्ग से चाहे, अर्थात् स्त्री को अपने कर्त्तव्य तथा आवश्यकताओं एवं योग्यता का ज्ञान होना चाहिए।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

भूरिदा ह्यसि श्रुतः पुरुत्रा शूर वृत्रहन्।
आ नो भजस्व राधसि।। **-ऋ० ४.३२.२१**

भावार्थ = हे अज्ञाननाशक महा पराक्रमी प्रभो! वेदादि सच्छास्त्र और इनके ज्ञाता महानुभाव महात्मा लोग, आपको सदा बहुत देने वाले बता रहे हैं। यह निश्चित है कि जो-जो पदार्थ आपने हमें दिये हैं और दे रहे हैं वे अनन्त हैं। हम याचक हैं आप महादानी हैं, अतएव हम आपसे बारम्बार माँगते हैं। भगवन्! आप हमें धन दो, बल दो, आयु दो, सुबुद्धि दो, शान्ति दो, सुख दो, मुक्ति दो।

इन्द्रं वर्धन्तो असुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।
अपघ्नन्तो अराव्णः।। **-ऋ० ९.३६.५**

भावार्थ-परम प्यारे पिता परमात्मा, हम सब पुत्रों को उपदेश देते हैं, कि मेरे प्यारे पुत्रो! तुम आलसी न बनो, वैदिक कर्मों के करने कराने वाले बनो, कंजूस मक्खीचूस स्वार्थी पापियों को परे हटाते हुए, सारे संसार को वेदानुकूल चलने वाला आर्य, परमेश्वर का भक्त और परमेश्वर का अनन्य प्रेमी बनाओ।

त्वमीशिषे सुतानामिन्द्र त्वमसुतानाम्।
त्वं राजा जनानाम्।। **-ऋ० ८.३४.३**

भावार्थ-हे सर्वशक्तिमान् परमात्मन्! आप उत्पन्न होने वाले पदार्थों के और अनादि जीव प्रकृति और सब ब्रह्माण्डों के राजा हैं। जड़ चेतन सब पदार्थों पर शासन कर रहे हैं। आपकी आज्ञा बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता, ऐसे समर्थ आप प्रभु की शरण में हम आये हैं, कृपया आप ही हमारी रक्षा करें।

प्रभु प्रेरणा से हम परमेष्ठी बनें

-डॉ. अशोक आर्य १०४ शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी×गाजियाबाद

यजुर्वेद का आरम्भ यह उपदेश देते हुए होता है कि जो व्यक्ति प्रभु की दी गयी प्रेरणा पर चलता है वह परमेष्ठी बनता है अर्थात् वह प्रभु के आदेश का पालन करने वाला, उस प्रभु के मार्ग-दर्शन में रहने वाला होता है। मंत्र का मूल पाठ इस प्रकार है-

ओ३म् इषे त्वोर्जेत्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मा मा व स्तेनऽईशत माघशंसो ध्रुवाऽऽ-अस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि।। यजुर्वेद 1.1।।

इस मंत्र में जीव ने परमात्मा से प्रार्थना करते हुए कहा है कि हे प्रभु! मुझे प्रेरणा दो। अपने भक्त की इच्छा पूर्ण करने के लिए प्रभु उसे उपदेश देते हुए, इस प्रकार की प्रेरणा देते हुए कहता है कि हे जीव! यदि तू परमेष्ठी बनना चाहता है तो तू इन प्रेरणाओ को अपने जीवन का अंग बना ले, इन्हें अपना ले। इन्हें अपनाने पर ही तू इस उत्तम पद को पा सकेगा। यह प्रेरणाएं इस प्रकार हैं-

१. तू गतिशील हो-प्रभु वायवःस्थ शब्द के माध्यम से जीव को प्रथम प्रेरणा देते हुए कहता है कि अकर्मण्यता से कोई भी प्राणी कभी ऊपर नहीं उठ सकता। ऊपर उठने के लिए सक्रिय होना आवश्यक है, पुरुषार्थी होना आवश्यक है, मेहनती होना आवश्यक है। इसलिए हे जीव! तू सदा गतिशील रह, क्रियाशील रह, पुरुषार्थ में लगा रह यह पुरुषार्थ ही तेरे काम आवेगा। अकर्मण्यता को तू अपने पास भी न आने दे। तू आत्मा है। आत्मा का अर्थ है सतत, निरन्तर गतिशील होना। जब जीव आत्मा के इस अर्थ को भूल कर अकर्मण्यता को अपना लेता है तो यह अकर्मण्यता उसे जीर्ण-शीर्ण कर देती है, उस का नाश कर देती है। इस के उलट यदि जीव पुरुषार्थी है, गतिशील है, क्रियाशील है तो इससे उस में विकास का उदय होता है, यह विकास का कारण बनती है। इससे स्पष्ट होता है कि जीव के लिए जिसे जीवन माना जाता है, वह है क्रियाशीलता। क्रियाशीलता ही उसके लिए जीवन है।

२. सुप्रेरक बनने की विद्वान लोग चेष्टा करे-प्रभु सविता देवः वः श्रेष्ठमाय कर्मणा प्रापयतु के माध्यम से उपदेश करते हैं कि हे जीव! बस तुम अपने अंदर ऐसी अनुकूलता पैदा करो कि विद्वान लोग, ज्ञानी पुरुष जो सदा प्रेरणा देने वाले प्रेरक होते हैं, वह लोग तुम्हें सदा श्रेष्ठ ही नहीं अपितु श्रेष्ठतम कर्मों की ओर प्रेरित करें क्योंकि इन कर्मों से ही तू ऊंचा उठेगा।

३. तुम प्रतिदिन बढ़ो-प्रभु मंत्र में आए शब्द आप्यायध्वम् के द्वारा पुनः प्रेरणा देते हुए उपदेश करते हैं कि हे जीव! तुम प्रतिदिन बढ़ो। तुम प्रतिदिन ऊपर उठो, उन्नति करो। यह सबका पुरुषार्थ होगा। इस सब के लिए एक मात्र मार्ग यह है कि हम निरंतर पुरुषार्थ करें, क्रियाशील रहें, उन्नति के पथ को न छोड़े। हम ने यह जो अपने को सक्रिय बनाया है, यह हमारी क्रियाशीलता हमें उत्तम कर्मों की ओर झुकाने वाली हो।

४. अहिंसकों में उत्तम बनो-प्रभु अघ्न्या शब्द से उपदेश करते हैं कि हे जीव! तू कभी हिंसक न बनना तथा कभी किसी की हिंसा न करने वालों में तुम उत्तम होना। स्पष्ट है कि प्रभु अहिंसक को उत्तम मानते है इस कारण वह माँसाहार के भी विरुद्ध है तथा किसी को भी माँसाहार की स्वीकृति नहीं देते। इस के साथ ही प्रभु का उपदेश है कि मानव का जो भी कार्य हो वह निर्माण के लिए, विकास के लिए, जन कल्याण के लिए हो, दूसरों के हित-अहित का ध्यान रखते हुए किया जावे तथा जन कल्याण के लिए हो। इस सब के साथ ही यह बात भी स्पष्ट की गयी है कि तुम्हारा कोई भी काम ध्वन्स के लिए, विनाश के लिए, जन उपहास के लिए नहीं होना चाहिए।

५. तुम मेरे उत्तम आदेशों को ही स्वीकारना-हमारे प्रभु नहीं चाहते कि उनके किसी गलत आदेश को स्वीकार करने के लिए कोई जीव बाध्य हो, (प्रभु चाहे कभी गलत उपदेश देते ही नहीं। तो भी) इसलिए वह आदेश देते है कि इंद्रायभागम् अर्थात् तुम लोग मुझ पर ऐश्वर्यशाली होने के कारण मेरे प्रत्येक आदेश का पालन करने के लिए बाध्य नहीं हो बल्कि मेरे केवल उस आदेश को ही स्वीकार करना जो हितकारी हो, कल्याणकारी हो, सर्वहितकारी हो, जो आदेश आपको अच्छा न लगे उसे आप किसी भी अवस्था में स्वीकार न करना। यहां प्रभु जीव को कर्म की स्वतन्त्रता दे रहा है। हां! यह ध्यान रखना कि तू अपने में प्रकृति का आधिक्य न होने देना, केवल प्रभु का ही आधिक्य तेरे अंदर हो अर्थात् प्रेय-मार्ग पर न चलकर श्रेय मार्ग को अपनाना। श्रेय मार्ग पर चलने वाले का सदा व सर्वत्र सम्मान होता है, जिसे पाने के लिए मानव यत्न शील रहता है। यदि तुम अपने जीवन को ऐसा बना पाए तो निश्चय ही तुमः

६. उत्तम संतानों वाले बनोगे-जब तुम्हारा जीवन सबका सम्मान पाने में सफल होगा तो तुम निश्चय ही उत्तम संतानों वाले उत्तम प्रजा वाले बनोगे। जिसकी संतान उत्तम न हो, जिसकी संतान आज्ञाकारी न हो, जिस की संतान दुर्गुणों से भरी हो, वह व्यक्ति कभी सुखी नहीं हो सकता, इस कारण सब लोग उत्तम संतान की कामना करते है। इसलिए हमारे श्रेय मार्ग का अवलंबन आवश्यक है, यह मार्ग ही उत्तम संतान प्राप्ति का साधन है।

७. रोगों से बचना-प्रभु अनमिवा के माध्यम से उपदेश देते हैं कि हे जीव! तू रोगों से ग्रसित मत होना तथा सदा ऐसे उपाय करना कि रोग तेरे को ग्रसित न कर सकें। अपने इस शरीर रूपी रथ से तूने बहुत से काम सम्पन्न करने हैं, भूत की सफलताएं प्राप्त करनी है, कहीं यह टूट न जावे। इसे तोड़ने वाले रोग ही होते है। इसलिए किसी भी रोग को तू अपने शरीर में प्रवेश न करने देना। यदि तू रोग ग्रस्त हो गया तो तेरे जीवन की यह यात्रा बीच में ही रूक जावेगी, पूर्ण न हो सकेगी। इस के साथ ही जो पांचवां उपदेश किया है, इन्द्राय भागम् अर्थात् जब तुम इंद्राभागम का भी ध्यान रखोगे तो तुम कभी भी रोगी न हो पाओगे।

यह सब कहने का भाव है कि उस पिता का कोई भी पुत्र, उस पिता का कोई भी भक्त कभी भी किसी रोग का ग्रास नहीं बनता, अस्वस्थ नहीं होता तथा वह प्रकृति में आसक्त नहीं होता। इस कारण रोग उसके पास आ ही नहीं पाते।

८. यक्ष्मा आदि भयंकर रोगों से बचें-मानव बहुत स्वार्थी प्राणी है। यह जीवन की सुख सुविधाएं बढ़ाने के लिए प्रकृति के नियमों को भी तोड़ता रहता है। इससे अनेक बार वह भयंकर बीमारियों में भी फँस जाता है। प्रभु इस से बचने के लिए प्रेरित करते हुए इस मंत्र के माध्यम से कहते हैं अयक्ष्मा अर्थात् हे प्राणी! तुझे कभी यक्ष्मा जैसे श्वास के भयंकर रोग न हों। इस रोग को राज-योग भी कहते हैं क्योंकि इस के उपचार पर अत्यधिक व्यय करना होता है, (जो साधारण व्यक्ति नहीं कर सकते) तो भी इसका निदान नहीं हो पाता। गरीब व्यक्ति तो इस के निदान के लिए धन की व्यवस्था भी नहीं कर सकता। इस रोग में रोगी का श्वास तेज चलने लगता है तथा उस श्वास क्रिया में भारी कठिनाई होती है। यह रोग प्रकृति के नियमों को तोड़ने से होता है। इसलिए प्रभु का आदेश है कि प्रकृति के नियमों का संतुलन बनाए रखें, इन्हें अस्त-व्यस्त न होने दें तो तुम इस भयंकर रोग से बच सकते हो।

९. बिना पुरुषार्थ कुछ प्राप्त न करें-जब मानव अपने पुरुषार्थ से, श्रम से कुछ पाता है तो उसे अत्यधिक आनंद का अनुभव भी होता है। किन्तु आलसी, प्रमादी व्यक्ति बिना किसी प्रकार की मेहनत के ही धनवान् बनने की कामना करता है। इस प्रकार जब उसे कुछ मिल जाता है तो वह आलसी बन जाता है, प्रमादी हो जाता है तथा अन्याय पूर्ण कार्य करने लगता है। इसलिए इस मंत्र के माध्यम से ईश्वर आदेश देता है कि मा वः स्तेन ईषत अर्थात् हे मानव! तू अपने मेहनत से, पुरुषार्थ से ही धन को प्राप्त कर आलसी को कभी अपना स्तेन अर्थात् बिना पुरुषार्थ के धन पाने का साधन न बनने देना। इस प्रकार अनेक प्रकार के सट्टा, जुआ, लाटरी आदि का कभी प्रयोग न करना क्योंकि यह सब बिना श्रम के धन प्राप्ति के साधन होते हैं। इस प्रकार से धन पाने वाला व्यक्ति काम-चोर, प्रमादी, आलसी, आराम पसंद बनकर अनेक प्रकार की बिमारियों में फंस जाता है।

१०. अपने कुकृत्यों को छुआ नहीं-प्रभु का आदेश है कि मानव को अपने कुकृत्यों को कभी झुठलाने का, इन्हें छुपाने का प्रयास नहीं करना चाहिये। ऐसे व्यक्ति को अपनी कमियों को, भूलों को न्याय संगत

(शेष पृष्ठ 6 पर)

सम्पादकीय

आचारः परमो धर्मः (सदाचार ही परम धर्म है)

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द जी सरस्वती स्वलिखित अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के दशमें समुल्लास में आचार एवं अनाचार विषय को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि-

अब जो धर्मयुक्त कामों का आचरण, सुशीलता, सत्पुरूषों का संग और सद्विद्या के ग्रहण में रूचि आदि आचार और इनके विपरीत अनाचार कहाता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी मनु महाराज द्वारा रचित मनुस्मृति के श्लोकों को उद्धृत करते हुए लिखते हैं कि-

मनुष्यों को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जिसका सेवन रागद्वेषरहित विद्वान् लोग नित्य करें, जिसको हृदय अर्थात् आत्मा से सत्य कर्त्तव्य जानें, वही धर्म माननीय और करणीय है।। १।। क्योंकि इस संसार में अत्यन्त कामात्मता और निष्कामता श्रेष्ठ नहीं है। वेदार्थज्ञान और वेदोक्त कर्म ये सब कामना ही से सिद्ध होते हैं।। २।। जो कोई कहे कि मैं निरिच्छ एवं निष्काम हूं वा हो जाऊँ तो वह कभी नहीं हो सकता क्योंकि सब काम अर्थात् यज्ञ, सत्यभाषणादि व्रत, यम नियमरूपी धर्म आदि संकल्प ही से बनते हैं।। ३।। क्योंकि जो-जो हस्त, पाद, नेत्र, मन, आदि चलाए जाते हैं वे सब कामना ही से चलते हैं। जो इच्छा न हो तो आंख का खोलना और मीचना भी नहीं हो सकता।। ४।। इसलिए सम्पूर्ण वेद, मनुस्मृति तथा ऋषिप्रणीत शास्त्र, सत्पुरूषों का आचार और जिस-जिस कर्म में अपना आत्मा प्रसन्न रहे अर्थात् भय, शंका, लज्जा, जिस में न हो उन कर्मों का सेवन करना उचित है। देखो! जब कोई मिथ्याभाषण, चोरी आदि की इच्छा करता है तभी उसके आत्मा में भय, शंका, लज्जा अवश्य उत्पन्न होती है इसलिए वह कर्म करने योग्य नहीं।। ५।।

मनुष्य सम्पूर्ण शास्त्र, वेद, सत्पुरूषों का आचार, अपने आत्मा के अविरूद्ध अच्छे प्रकार विचार कर ज्ञान नेत्र करके श्रुति प्रमाण से स्वात्मानूकूल धर्म में प्रवेश करे।। ६।। क्योंकि जो मनुष्य वेदोक्त धर्म और जो वेद से अविरूद्ध स्मृत्युक्त धर्म का अनुष्ठान करता है वह इस लोक में कीर्ति और मर के सर्वोत्तम सुख को प्राप्त होता है।। ७।। श्रुति वेद और स्मृति धर्मशास्त्र को कहते हैं। इन से सब कर्त्तव्याकर्त्तव्य का निश्चय करना चाहिए।। ८।। जो कोई मनुष्य वेद और वेदानुकूल आप्तग्रन्थों का अपमान करे उसको श्रेष्ठ लोग जातिबाह्य कर दें। क्योंकि जो वेद की निन्दा करता है वही नास्तिक कहाता है।। ९।। इसलिए वेद, स्मृति, सत्पुरूषों का आचार और अपने आत्मा के ज्ञान से अविरूद्ध प्रियाचरण, ये चार धर्म के लक्षण अर्थात् इन्हीं से धर्म लक्षित होता है।। १०।। परन्तु जो द्रव्यों का लोभ और काम अर्थात् विषयसेवा में फंसा हुआ नहीं होता उसी को धर्म का ज्ञान होता है। जो धर्म को जानने की इच्छा करें उनके लिए वेद ही परम प्रमाण है।। ११।।

इसी विषय को और स्पष्ट करते हुए महर्षि दयानन्द जी सरस्वती आगे लिखते हैं कि मनुष्य का यही मुख्य आचार है कि जो इन्द्रियां चित्त का हरण करने वाले विषयों में प्रवृत्त कराती हैं उनको रोकने में प्रयत्न करें। जैसे घोड़ों को सारथि रोक कर शुद्ध मार्ग में चलाता है इस प्रकार इन को अपने वश में करके अधर्ममार्ग से हटा के धर्ममार्ग में सदा चलाया करे, क्योंकि इन्द्रियों को विषयासक्ति और अधर्म में चलाने से मनुष्य निश्चित दोष को प्राप्त होता है और जब इनको जीतकर धर्म में चलाता है तभी अभीष्ट सिद्धि को प्राप्त होता है। यह निश्चय है कि जैसे अग्नि में इन्धन और घी ड़ालने से बढ़ता जाता है वैसे ही कामों के उपभोग से काम शान्त कभी नहीं होता किन्तु बढ़ता ही जाता है। इसलिए मनुष्य को विषयासक्त कभी न होना चाहिए। जो अजितेन्द्रिय पुरूष है उसको विप्रदुष्ट कहते हैं। उसके करने से न वेदज्ञान, न त्याग, न यज्ञ, न नियम, और न धर्माचरण सिद्धि को प्राप्त होते हैं किन्तु ये सब जितेन्द्रिय धार्मिक जन को सिद्ध होते हैं। इसलिए पांच कर्मेन्द्रिय, पांच ज्ञानेन्द्रिय और ग्याहरवें मन को अपने वश में करके युक्ताहार विहार योग से शरीर की रक्षा करता हुआ सब अर्थों को सिद्ध करे।

जितेन्द्रिय उसको कहते हैं जो स्तुति सुन के हर्ष और निन्दा सुन के शोक, अच्छा स्पर्श करके सुख और दुष्ट स्पर्श से दुःख, सुन्दर रूप देख के प्रसन्न और दुष्ट रूप देख के अप्रसन्न, उत्तम भोजन करके आनन्दित और निकृष्ट भोजन करके दुःखित, सुगन्ध में रूचि और दुर्गन्ध में अरूचि नहीं करता है। कभी बिना पूछे वा अन्याय से पूछने वाले को जो कपट से पूछता हो उसको उत्तर न देवे। उनके सामने बुद्धिमान जड़ के समान रहे। हां जो निष्कपट और जिज्ञासु हों उनको बिना पूछे भी उपदेश करे। एक धन, दूसरे बन्धु कुटुम्ब कुल, तीसरी अवस्था, चौथा उत्तम कर्म और पांचवी श्रेष्ठ विद्या ये पांच मान्य के स्थान हैं। परन्तु धन से उत्तम बन्धु, बन्धु से अधिक अवस्था, अवस्था से श्रेष्ठ कर्म और कर्म से पवित्र विद्या वाले उत्तरोतर अधिक माननीय हैं। क्योंकि चाहे सौ वर्ष का भी हो परन्तु जो विद्या विज्ञानरहित है वह बालक और जो विद्या विज्ञान का ज्ञाता है उस बालक को भी वृद्ध मानना चाहिए। क्योंकि सब शास्त्र आप्त विद्वान अज्ञानी को बालक और ज्ञानी को पिता कहते हैं। अधिक वर्षों के बीतने, श्वेत बाल के होने, अधिक धन से और बड़े कुटुम्ब के होने से वृद्ध नहीं होता। किन्तु ऋषि महात्माओं का यही निश्चय है कि जो हमारे बीच में विद्या विज्ञान में अधिक है वही वृद्ध पुरूष कहाता है। ब्राह्मण ज्ञान से, क्षत्रिय बल से, वैश्य धन धान्य से और शूद्र जन्म अर्थात् अधिक आयु से वृद्ध होता है। इसलिए विद्या पढ़, विद्वान् धर्मात्मा होकर निर्वैरता से सब प्राणियों के कल्याण का उपदेश करे और उपदेश में वाणी मधुर और कोमल बोले। जो सत्योपदेश से धर्म की वृद्धि और अधर्म का नाश करते हैं वे पुरूष धन्य हैं। नित्य स्नान, वस्त्र, अन्न, पान, स्थान सब शुद्ध रखें क्योंकि इनके शुद्ध होने में चित्त की शुद्धि और आरोग्यता प्राप्त होकर पुरूषार्थ बढ़ता है। शौच उतना करना योग्य है कि जितने से मल दुर्गन्ध दूर हो जाए। **आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त्त एव च।** अर्थात् जो सत्यभाषणादि कर्मों का आचरण करना है वही वेद और स्मृति में कहा हुआ आचार है।

श्रुति-स्मृति प्रतिपादित आचार को धारण करने एवं अनाचार का त्याग करने से मनुष्य का जीवन श्रेष्ठ बन जाता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का यही उद्देश्य था कि मनुष्य अपनी इन्द्रियों पर संयम रखे और उन इन्द्रियों को अधर्ममार्ग से हटा कर धर्ममार्ग में प्रवृत्त करें। समाज में फैल रही बुराईयों का एक कारण यह भी है कि मनुष्य अपनी इन्द्रियों पर नियन्त्रण खोता जा रहा है। इसीलिए जो मनुष्य वेद मार्ग पर चलते हुए अपने मन एवं इन्द्रियों को अपने वश में कर लेता है वही विजयी होता है। इसीलिए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने मनुष्यों में सदाचार की स्थापना एवं दुगुर्णों का त्याग करने के लिए सत्यार्थ प्रकाश में इस महत्वपूर्ण विषय का विवेचन किया।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

गीता की प्रासांगिकता

ले०-महात्मा चैतन्यमुनि, महादेव सुन्दरनगर जिला मण्डी हि. प्र.

श्रीमद् भगवद्गीता संसार के इतिहास में एक ऐसा अनुपम ग्रन्थ है जो विद्वानों का मार्गदर्शन तो करता ही है मगर इस ग्रन्थ ने अपनी पैठ जन साधारण तक भी समग्र रूप से स्थापित की है। भारतवर्ष की ही नहीं बल्कि आज संसार की अनेक भाषाओं में इस ग्रन्थ का पठन-पाठन बड़ी श्रद्धा और आस्था के साथ किया जाता है। इस ग्रन्थ की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए ही शंकराचार्य, रामानुजाचार्य तथा माध्वाचार्य आदि से लेकर आधुनिक युग के स्वामी शिवानन्द, स्वामी चिन्मयानन्द, लोकमान्य तिलक, अरविन्द, सातवेलकर तथा विनोबा भावे आदि मनीषियों ने भी गीता का अपने-अपने ढंग से विवेचन किया है। वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् एवं महान् समाज-सुधारक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने अपने ग्रन्थ 'सत्यार्थ-प्रकाश' की भूमिका में गीता के श्लोक (18-37) को उद्धृत् किया है जिसका भाव है कि जो सुख प्रारंभ में विष जैसा प्रतीत होता है, अन्त में अमृत के समान होता है, जो आत्मनिष्ठ बुद्धि के प्रसाद से प्राप्त होता है.... इसी ग्रन्थ के आठवें समुल्लास में उन्होंने इस भाव को प्रकट करने के लिए कि असत् वस्तु का कभी भाव नहीं होता तथा सत् पदार्थ का कभी अभाव नहीं होता, भी गीता को उद्धृत् (2-16) किया है। अन्य स्थानों पर भी उन्होंने गीता का उल्लेख किया है.... महर्षि जी ने एक बार गीता को प्रक्षिप्त मानने वाले महन्त बालकृष्ण को शास्त्रार्थ के लिए भी ललकारा था मगर वह सज्जन महर्षि जी के पास शास्त्रार्थ करने के लिए नहीं आए..... महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने गीता को प्रक्षिप्त नहीं माना है संभवत: इसीलिए उन्होंने सत्यार्थ-प्रकाश में इसे समीक्षा योग्य नहीं माना तथा उसके प्रति वैसा कड़ा भाव भी नहीं अपनाया जैसा कि पुराणादि अवैदिक गन्थों के प्रति अपनाया है.... उन्होंने गीता के श्लोक (18-42) के एक पद 'शौच' के व्याख्यान में मनुस्मृति के श्लोक (5-109) को उद्धृत करके उसकी व्याख्या भी की है। गृहस्थाश्रम प्रकरण में भी उन्होंने क्षत्रिय के गुणों का वर्णन करते हुए गीता का उद्धरण (18-43) दिया है। एक अन्य प्रसंग में गीता के श्लोक (18-46) के सन्दर्भ में उन्होंने व्याकरण का आश्रय लेकर 'सर्वधर्मान्' को 'सर्व अधर्मान्' कहकर इस श्लोक में अकार का लोप माना है। आर्यजगत् के बहुत से विद्वानों ने गीता पर भाष्य प्रस्तुत किए है जिनमें पण्ड़ित आर्यमुनि, स्वामी विद्यानन्द 'विदेह', स्वामी समर्पणानन्द, वैद्य गुरूदत्त तथा सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार आदि प्रमुख है। इसके अतिरिक्त पण्ड़ित भूमित्र शर्मा, पण्ड़ित भीमसेन, तुलसी राम स्वामी, स्वामी दर्शानान्द, ब्रह्मचारी नित्यानन्द झा, राजा राम जी शास्त्री, स्वामी आत्मानन्द, आचार्य नरदेव वेदतीर्थ, विद्याभास्कर रामावतार, उदयवीर शास्त्री, बुद्धदेव मीरपुरी, शास्त्रार्थ महारथी बिहारीलाल और अमर स्वामी सरस्वती आदि अनेक विद्वान् भी गीता के प्रसंशक रहे हैं.....

गीता के रचनाकाल को लेकर विद्वानों में पर्याप्त मतभेद हो सकते है मगर हम इस ऊहापोह में न जाकर इस सम्बन्ध में केवल इतना ही कहना चाहते हैं कि गीता अपने आप में अलग से कोई ग्रन्थ नहीं है बल्कि महाभारत ग्रन्थ के भीष्म-पर्व के 25 से 42 वें अठारह अध्याय ही गीता है इसलिए महाभारत काल को ही गीता का रचना काल माना जाना अपेक्षित है तथा महाभारत के रचेता महर्षि व्यास जी एवं श्रीकृष्ण जी के काल को ही गीता का रचना काल मानना उचित होगा। इस दृष्टिकोण से गीता का रचना काल आज से लगभग पांच हजार वर्ष पूर्व का बैठता है।

गीता के प्रतिपाद्य विषय को समझने के लिए हमें यह मानकर चलना होगा कि गीता श्रीकृष्ण जी द्वारा दिया गया कोई नया ज्ञान नहीं है बल्कि यह वही ज्ञान है जो आदि परंपरा से चला आ रहा है मगर अपने आलस्य और प्रमाद आदि के कारण व्यक्ति उसे विस्मृत करके अनेक प्रकार की समस्याओं में उलझ कर जीवन बर्बाद कर देता है। गीता का मनन और चिन्तन करने के बाद हमें तो ऐसा लगा मानों यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के प्रथम दो मन्त्रों का विशद् विवेचन ही गीता है। गीता के सम्पूर्ण कथन का आधार वेद व उपनिषदादि ग्रन्थ ही है। श्रीकृष्ण जी इस ज्ञान के बारे में स्वयं कहते है कि (13-4) उनसे पूर्व भी वेदों में तथा ब्रह्मसूत्रों में ऋषि-मुनियों ने इस ज्ञान का युक्तियुक्त ढंग से भली-भान्ति निश्चय किया है। गीता के अध्ययन से व्यक्ति परमात्मा और कर्म के दर्शन को भली प्रकार से समझने में समर्थ हो जाता है। गीता हमें जीवन की कठिन से कठिन परिस्थिति में भी पलायनवादी न बनकर सतत् संघर्ष करने की प्रेरणा देती है। अर्जुन की मुख्य समस्या यही है कि वह अपने कर्त्तव्य-पथ से च्युत होने के लिए अनेक प्रकार के असंगत तर्क प्रस्तुत करने लग जाता है। क्षत्रिय होने के कारण उसमें यह कायरता पहले नहीं थी..... उससे पहले भी उसने युद्ध लड़े थे तथा अपने विरोधियों को धूल चटाई थी। बल्कि हम महाभारत में ही देखते हैं कि जब धर्मराज युधिष्ठर भीष्म पितामह जी द्वारा रची गई व्यूह रचना को देखते हैं तो व्याकुल होकर अर्जुन से कहते हैं कि (भी. प. 21-2 से 5) हे अर्जुन! देखो भीष्म ने ऐसे ढंग से व्यूह की रचना की है कि उसे भेदना कठिन है। यह व्यूह रचना अक्षोभ्य और अभेद्य है। इस कारण हमारी सेनाओं के प्राण संकट में पड़ गए हैं। समझ में नहीं आ रहा कि इस संकट से कैसे उद्धार हो....। महाराज युधिष्ठर की ऐसी दशा को देखकर अर्जुन उनके उत्साह को बढ़ाने के लिए तो अनेक प्रकार की बातें करता है (21-7 से 12) मगर अब जब वह स्वयं दोनों सेनाओं के मध्य में आकर पहुंचा तो वह स्वयं ही युद्ध से पलायन करने की स्थिति में आ गया। यहां पर इस तथ्य पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि युधिष्ठिर और अर्जुन के भय में बहुत बड़ा अन्तर है। युधिष्ठिर तो विरोधी योद्धाओं की शक्ति को देखकर अपनी पराजय की संभावना को लेकर भयभीत है मगर अर्जुन के भय तथा पलायन का कारण कुछ और ही है। उसके सामने जय-पराजय का तो प्रश्न ही नहीं रहा है। वह तो युद्ध-भूमि में अपनों को देखकर इतना मोह-ग्रस्त हो गया कि उसे युद्ध से वितृष्णा हो गई। इस योद्धा का मुंह सूखने लगा, हाथ-पांव कांपने लगे तथा गाण्डीव को एक ओर रखकर यहां तक कह देता है कि 'मैं युद्ध नहीं करूंगा।' युद्ध न लड़ने के वह अनेक प्रकार के तर्क देता है..... उसे युद्ध अमानवीय तथा अधर्म-कृत्य लगने लगता है.... वह अपने आप को बहुत बड़ा ज्ञानी समझकर श्रीकृष्ण जी के सामने मनमाने तर्क पुस्तुत करने लगता है.... उस काल का प्रमुख योद्धा अर्जुन जब इस प्रकार की बातें करने लगे तथा वह भी ऐसे समय में जब दोनों सेनाएं युद्ध के लिए बिल्कुल तैयार खड़ी हों तो श्रीकृष्ण जी के सामने एक विकट स्थिति पैदा हो गई। ऐसे विकट समय में दिया गया गीता का उपदेश वास्तव में ही अद्भुत व अनुपम है।

गीता का उपदेश आज पहले से भी अधिक प्रासांगिक है क्योंकि आज लगभग प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी एषणा को लेकर भ्रमित है। वह या तो पलायनवादी बनकर अपने दायित्व से मुक्ति पाने का प्रयास कर रहा है या फिर सुविधा-भोगी बनने की दिशा में अपने द्वारा अपनाए गए तथाकथित धर्म या स्वार्थ-पूर्ति के लिए किए गए कर्म की व्याख्याएं अपने-अपने ढंग से प्रस्तुत करने का अपराध कर रहा है। चित्त-वृत्तियों की गुणवता को बदलने का प्रयास करने तथा वेद-विहित कर्मों को अपनाने के स्थान पर वह अपने क्रिया-कलापों की मन-मानी व्याख्याएं करके उसे ही तर्कसंगत सिद्ध करने के प्रयास में है। मोहरूपी एषणा के वशीभूत हुआ अर्जुन भ्रमित है तथा वह भी धर्म-कर्म की मनमानी व्याख्याएं कर रहा है। उसका सौभाग्य यह रहा कि श्रीकृष्ण जी जैसा परम-योगी उसका दिशा-निर्देश करने के लिए मौजूद थे। श्रीकृष्ण जी उसे ज्ञान-योग, कर्म-योग, भक्ति-योग तथा ध्यान-योग आदि के माध्यम से समझाकर मुख्य-रूप से उसके चिन्तन को इस स्थान पर पहुंचाने में सफल होते हैं कि वह मोह रहित होकर युद्ध के लिए तैयार हो जाता है। गीता के अनुसार निष्कामता, नि:संगता, फलासक्ति-त्याग, निमित्तमात्रता तथा परमात्म-समर्पण में ही हमारी समस्त समस्याओं का समाधान निहित है। आज के दिग्भ्रमित व्यक्ति को भी गीता में अपनी प्रत्येक समस्या का समाधान मिल सकता है.... किसी भी ऊंची बात को समझने के लिए व्यक्ति का अपना चिन्तन भी ऊंचा होना अपेक्षित होता है मगर कुछ सांप्रदायिक तथा पूर्वाग्रही लोगों ने गीता को इस ढंग से लोगों के सामने प्रस्तुत किया कि गीता पढकर भी व्यक्ति अनेक प्रकार के भ्रमों का

(शेष पृष्ठ 7 पर)

परमपिता परमात्मा का आदेश-"मनुर्भव"

ले०-आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री आर्यसमाज बाहरी रिंगरोड, विकासपुरी

(गतांक से आगे)

अत: आर्यसमाज कोई मत मजहब नहीं अपितु विश्वधर्म या मानव धर्म का प्रचारक संगठन है।

प्रत्येक को अपनी उन्नति से सन्तुष्ट न होना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए। कितना प्यारा चिन्तन है।

पावक की लपटों में पड़कर सोना कुन्दन बन जाता है।
भाव शुद्ध हो तो छोटा सा धागा बन्धन बन जाता है।
संघर्षों की भट्ठी में तपना छोटी बात नहीं।
त्याग, तपस्या से मानव माथे का चन्दन बन जाता है।

प्रत्येक मानव का धर्म है मानवता। मानवता के दिव्यगुणों का वर्णन इस प्रकार है। 1. निर्भयता, 2. अन्त:करण की शुद्धि, 3. ज्ञानयोग में स्थिति, 4. दान, 5. दम, 6. यज्ञ, 7. स्वाध्याय, 8. तप, 9. सरलता, 10. अहिंसा, 11. सत्य, 12. अक्रोध, 13. त्याग 14. शान्ति, 15. चुगली का अभाव 16. प्राणियों पर दया कृपा, 17. निर्लोभता, 18. कोमलता, 19. लज्जा, 20. अचपलता, 21. तेज, 22. क्षमा, 23. धैर्य, 24. पवित्रता, 25. द्रोह का अभाव और 26. अभिमानी न होना। ये सब हे भारत (भारत के नागरिक भारत की संस्कृति के अनुसार) दैवी सम्पदा को प्राप्त हुए मानव के अथवा मानवता के लक्षण हैं।

संस्कृति के हित कट जाय वो माथा मुझको दे,
गरीबों को जो उठाले वो हाथ मुझको दे।
तड़प उठे देखकर पराई पीड़ा को,
दिल वो देव दयानन्द सा नाथ मुझको दे।।

महर्षि दयानन्द में मानव के प्रति करुणा का भाव चरमोत्कर्ष पर था, संन्यासी होने पर भी उन्होने संसार के जीवों को तथाकथित वैरागियों की भांति उपेक्षित कर दया और आनन्द के अमृत से वंचित नहीं रखा सच तो ये है कि वह मानवता के उद्धारकों में इस दया और आनन्द का पात्र प्राणिमात्र को बनाकर वह मूर्धन्य स्थान के अधिकारी बन गये हैं।

अनूपशहर में दुष्ट ने उन्हें विषयुक्त पान दिया। चबाने से पता लगा तो उन्होंने न्योलि क्रिया द्वारा वमन कर विष निकाल दिया। वहाँ सैय्यद मुहम्मद तहसीलदार आपका भक्त था।

उसने हत्यारे को पकड़कर बन्दीगृह में डाल दिया। कुछ समय के बाद वह स्वामी जी की सेवा में आया तो स्वामी जी ने देवसुलभ अप्रतिम दयालुता का परिचय देते हुए यह स्मरणीय वाक्य कहा कि मैं संसार को कैद कराने नहीं आया हूँ अपितु कैद से छुड़ाने आया हूँ।

ऋषिवर ने जनहित के लिए गोकरुणानिधि के रूप में वह खजाना सौंपा जहाँ उन्होंने आर्थिक विश्लेषण करके गाय की उपयोगिता दर्शायी वहाँ उन्होंने गाय को मूक असहाय पशुओं का प्रतिनिधि मानकर उनकी करुण पुकार भी लोगों के सामने रखी और उनके प्रति अत्याचार न हो ऐसी व्यवस्था करने का संदेश दिया। एवं संस्कार विधि के रूप में ऋषि ने मनुष्य के लिए संसार में किस प्रकार मनुष्य नर से नरोत्तम बने, उसका आचरण कैसा हो इसके लिए उपयोगी आवश्यक निदेशिका प्रस्तुत की। उस अनुपम ग्रन्थ का नाम संस्कारविधि है, जिससे मनुष्य संस्कारशील बने, तथा पशुत्व पाश से मुक्त होकर और मनुष्यत्व के गुणों से युक्त होकर अन्तिम अवस्था देवत्व की प्राप्त करे।

एक बार जर्मनी के पत्रकारों ने नेता जी सुभाषचन्द्र बोस से साक्षात्कार में कुछ प्रश्न पूछे थे कि यदि संसार से अमेरिका समाप्त हो जाये तो क्या हानि होगी? नेता जी ने जवाब दिया कि यदि अमेरिका समाप्त हो जाये तो विश्व की दौलत समाप्त हो जायेगी। पत्रकारों ने पूछा यदि "जर्मनी" नष्ट हो जाये तो क्या होगा? नेता जी कहने लगे यदि जर्मनी नष्ट हो जाये तो दुनियाँ से "विज्ञान" समाप्त जायेगा। फिर पूछा गया कि यदि "ईराक" समाप्त हो जाए तो? तो उत्तर मिला कि अगर ईराक समाप्त हो गया तो देश भक्ति समाप्त हो जायेगी। क्योंकि ईराक के लोग पहले से ही देशभक्ति में प्रसिद्ध है। फिर पत्रकारों ने पूछा कि यदि यूरोप समाप्त हो जाये तो फिर क्या होगा? सुभाषचन्द्र कहते हैं कि दुनियाँ से सुन्दरता समाप्त हो जायेगी। पत्रकारों ने पूछा कि विश्व से यदि इंग्लैण्ड समाप्त हो जाये तो? फिर नेता जी कहने लगे दुनियाँ से मक्कारी समाप्त हो जायेगी। अन्त में पत्रकारों ने पूछा कि यदि भारत नष्ट हो जाये तो? तब नेता सुभाषचन्द्र जी कहते हैं कि यदि भारत समाप्त हो जाये तो दुनिया से मानवता सदा के लिये नष्ट हो जायेगी।

दुनियाँ को मानवता का पाठ पढ़ाने वाली यह वैदिक संस्कृति है।

जिसको मेहनत से बहाना पसीना आता है।
फटा आंचल दु:खी दुर्बल का सीना आता है।।
चाहता और के जीने में जो अपना जीना।
सच तो यह दुनियाँ में उसको ही जीना आता है।।

परन्तु आज चारों ओर अशान्तता के बादल मंडरा रहे हैं। जिधर देखो उधर ही त्राहि-त्राहि माम् की आवाज से आकाश गुंजायमान हो रहा हैं। अपने प्रसिद्ध नाटक में महाकवि जयशंकर प्रसाद ने प्रश्न उठाया था कि मानव में क्या वह तन्तु है कि वह ऐसा जन्तु बन सके जो दुर्दान्त हो इसकी मैं कल्पना नहीं कर सकता। किन्तु जिसकी कल्पना भी उनके लिए इतनी भयावह थी, आज मानव शरीर धारी दानव से भी दुर्दान्त बनकर न केवल उन्मुक्त घूम रहे वरन् जिधर देखों हर तरफ लड़ाई-झगड़ा कहीं धर्म के नाम पर तो कही सत्ता के नाम पर।

लड़ाई झगड़े हर मुकाम पर।
यहां तक कि लड़े धर्म के स्थान पर।।
यही हालत रही गर तो।
लड़ेंगें मुर्दे कब्रिस्तान पर।।

कारण स्पष्ट है कि हमने "मनुर्भव" इस दिव्य वैदिक आदेश की न केवल उपेक्षा ही है, अनदेखी ही की है वरन् इसके प्रति हमारी आपराधिक सर्वथा अक्षम्य अवज्ञाशीलता रही है।

दुष्परिणाम यह है कि जिन लोगों के बारे में स्त्री पूर्णत: आश्वस्त थी कि उनकी दृष्टि इतनी पवित्र है जितना अपना उसका शरीर ही नहीं उनसे भी आज वह अपनी अस्मिता की रक्षा की आशा नहीं कर सकती।

एक समय था घोर घने जंगल में जाती हुई महिला को जानकर से डर लगता था, इंसान से नहीं। शायद जानकर मुझे खा जायेगा, इंसान मेरी रक्षा करेगा। परन्तु आज स्थिति यह है कि घोर घने जंगल में प्रवेश करती हुई महिला को जानवर से डर नहीं, अपितु इंसान से डर लगता है, शायद जानवर उसकी रक्षा करेगा, इंसान आज भक्षक बन गया हैं।

आइये हम सब लोग "मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्" इस दिव्य आदेश का पालन करें, इसके मर्म को समझे, मानवधर्म को अपना कर्म बनाये, और यह संकल्प लें कि हम मानव बनेंगे, ऐसे मानव जो दानव का अस्तित्व भूतल पर नहीं रहने देंगे। यदि हमारा यह संकल्प और इसके प्रति हमारी तैयारी निर्विकल्प हो तभी हम अपने आपको वैदिक धर्म की जय बोलने का अधिकारी बना सकते हैं।

"श्रेयांसि बहुविघ्नानि" श्रेष्ठ कार्य में विघ्न तो आते हैं, उससे घबराना नहीं है, ईस्वर का आदेश, वेदवाणी का निर्देश "मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्" इसका पूर्णत: प्रचार प्रसार करने में संलग्न हो जायें।

इस जिन्दगी में बन्दे, कुछ ऐसा काम कर जा।
आया है इस जहाँ में, कुछ पैदा नाम कर जा।
निर्माणों के पावन युग में, हम मानव निर्माण न भूलें।
स्वार्थसाधना की आंधी में, वसुधा का कल्याण न भूलें।

बाल दिवस मनाया

दयानन्द पब्लिक स्कूल में बाल दिवस एक आकर्षक अंदाज में मनाया गया। इस अवसर पर कार्निवल बाल मेला का आयोजन किया गया। इस का शुभारम्भ प्रबंधकीय कमेटी से स्कूल प्रबंधक श्री मनीश मदान (मुख्यातिथि) ने किया। इस अवसर पर प्रधान संत कुमार जी विशेष रूप से उपस्थित थे। स्कूल में बच्चों के लिए विशेष रूप से झूले लगाए गए। अनेक प्रकार के खाने-पीने के स्टाल लगाए गए बच्चों ने झूलों पर खूब मौज मस्ती की और अलग-अलग व्यंजनों का पूरा लुत्फ उठाया। बच्चों की इस दिन की महत्ता बताते हुए प्रिंसीपल मैडम ने बच्चों को नेहरु जी के जीवन से प्रेरणा लने को कहा। कक्षा आठवीं की छात्रा स्नेहा ने बाल दिवस पर नेहरु जी से संबधित उनकी जीवनी पढ़ कर उनके जीवन पर प्रकाश डाला। प्रिंसीपल मैडम द्वारा आयोजित इस आकर्षक कार्निवल के लिए सब ने भरपूर सराहना की और भविष्य में भी ऐसे आयोजन करना, स्कूल में बच्चों को पढ़ाई के साथ-साथ अन्य गतिविधियों में भी आगे बढ़ाना है। इस आयोजन की सफलता पर कमेटी के सदस्यों ने एवं समूह स्टाफ ने प्रिंसीपल मैडम को बधाई दी।

पृष्ठ 2 का शेष-प्रभु प्रेरणा से हम...

ठहराने के लिए अनेक झूठ बोलने पड़ते हैं, अनेकों के हितों की हानि करनी होती है। इसलिए प्रभु महाशंसो के भाव में कह रहे हैं कि अपने पाप को कभी भी अच्छे रुप में प्रकट न करना। इतना ही नहीं कोई अन्य व्यक्ति भी तुम्हारे विचारों पर शासन न करे अर्थात् आप स्वाधीन हो अपना कार्य करें तथा अपने विचार रखें किसी ओर के आदेश पर अपने विचार न बनावें।

११. तुम सदा अटल, ध्रुव रहना-प्रभु कहते हैं कि हे मानव तू इस गोपतौ में, इस जगत् में सदा ध्रुव के समान स्थिर रहना, अटल रहना। इस संबंध में वेद के यह शब्द प्रयोग करते हुए कहते हैं ध्रुवाअस्मिन गोपतौ स्यात् अर्थात् तू सदा अटल रहना। गोवें ही हमारी इन्द्रियाँ है, तथा इन इंद्रियों का रक्षक स्वयम् प्रभु होता है। हम गौओं को वेदवाणी के रूप में भी ले सकते है। हम यह भी जानते हैं कि वेदवाणी का पति, मालिक हमारा वह पिता ही तो होता है। यदि तुम उत्तम वेदवाणी के प्रकाश में प्रकाशित होना चाहते हो तो वेदवाणी के मालिक प्रभु में ध्रुव के समान स्थिर होकर रहना। प्रभु हमारे चक्की की धुरी है। चक्की में पड़ा हुआ वह दाना ही बच पाता है जो इस की धुरी को पकड़ लेता है। ठीक इस प्रकार ही इस जगत् में वह प्राणी ही बच पाता है जो प्रभु को पकड़ लेता है, उसे छोड़ता नहीं।

१२. समाज में रहते हुए औरों का सहयोगी बनना-प्रभु जीव को वही अर्थात् दूसरों का सहयोगी बनने का उपदेश देते हैं तथा कहते है कि हे प्राणी! तू कभी भी आत्मकेंद्रित न होना, केवल अपने ही बारे में न सोचना, कभी स्वार्थी न बनना। तू एक सामाजिक प्राणी है इस लिए सदा अधिक से अधिक लोगों से संपर्क बनाने का प्रयास करते रहना। दूसरों के संपर्क में रहना। इस बात का सदा ध्यान रखना कि मैं एक न रहूं बल्कि एक से बहुत हो जाऊं। केवल स्वयम् ही सुखी होने का यत्न न करना बल्कि दूसरों के सुखों को बढ़ाने के लिए उन के दु:खों को भी दूर करने का प्रयत्न करते रहना।

१३. कामादि को सुरक्षित रखना-आप जानते हैं कि इस संसार की किसी भी उत्तम वस्तु की रक्षा करने की व्यवस्था नहीं करनी होती, वह स्वयमेव ही वितरित होती रहती है किन्तु हानिकारक पदार्थों को छुपाना पड़ता है ताकि यह बुरी वस्तु किसी के हाथ में आकर हानि का कारण बन बन जावे। यजमानस्य शब्द के माध्यम से प्रभु इस वेद मंत्र में यह भी अन्तिम आदेश या अन्तिम प्रेरणा दे रहे हैं कि काम, क्रोध आदि हमारे अंदर के शत्रुओं को, इन पाश्विक वृत्तियों को गुप्त स्थान पर सुरक्षित करके रखें किसी के हाथ न लगाने दें। यदि यह दुष्ट वृत्तियां किसी ने प्रयोग में ले लीं तो भारी विनाश का कारण बन जावेंगी। हम उपयोगी वस्तुओं को तो खुले में रखते है किंतु हानि देने वाले पदार्थों तेज़ाब आदि को अलमारी में ही रखते है क्योंकि इससे भारी हानि की संभावना होती है। हम चिड़ियाघर देखने जाते है, वहां देखते है कि साधारण जीव तो खुले में घूम रहे होते है किन्तु बाघ आदि को बड़े भारी पिंजरों में रखा होता है। कुछ ऐसा ही हमारी बुराईयों के लिए भी होता है। काम-क्रोध आदि भी हमारे जीवन का भाग होते हैं किन्तु इन्हें संभालने की आवश्यकता होती है। कामादि संसार को चलाने की क्रिया है। इस की संसार में आवश्यकता है किन्तु इस के अनियंत्रित होने पर शक्ति का विनाश होता है, शक्ति का क्षय होता है।

इसे संतुलित व संयमित करना भी आवश्यक है। इस प्रकार ही कोश अथवा दोष भी जीवन में आवश्यक है किन्तु इस का भी संतुलित होना आवश्यक है अन्यथा विनाश होगा।

इस मंत्र के आरंभ में जीव ने परम पिता परमात्मा से उसे प्रेरणा देने की प्रार्थना की थी। पिता अपने पुत्र की इच्छा को कैसे टाल सकता था। अत: प्रभु ने उसे इस मंत्र के ही माध्यम से विभिन्न प्रकार से प्रेरित किया। उसे प्रेरित करने के लिए उस ने उसे सत्य के तेरह स्वरूप दिखाए। इन तेरह उपदेशों को अपनाने वाला जीव ही अंत में परम स्थान में स्थित होता है। यह जीव अपनी प्रजा की रक्षा करने के कारण प्रजापति भी कहलाता है। जो भी जीव इन तेरह उपदेशों पर चलेगा, वह निश्चय ही उन्नति की लहरों की छाती पर तैरेगा, पर्वतों की चोटी के समान ऊंचा उठेगा।

मानव हो मानवता धारो

-पं. नन्दलाल निर्भय, पलवल

ईश्वर का उपकार भुलाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।
मानव जीवन व्यर्थ गंवाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।।

ईश्वर ने कृपा की भारी।
मानव देह हम को दी प्यारी।।

मानव होकर पाप कमाना ठीक नहीं ठीक नहीं।
मानव जीवन व्यर्थ गंवाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।।

बली बनो शुभ कर्म करो तुम।
दुष्कर्मो से सदा डरो तुम।।

निर्दोषों को कभी सताना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।
मानव जीवन व्यर्थ गंवाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।।

धनी बनो, बन जाओ दानी।
जग में कर दो अमर कहानी।।

धन-दौलत पा, लोभ दिखाना ठीक नहीं, ठीक नहीं।
मानव जीवन व्यर्थ गंवाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।।

विद्या पढ़, विद्वान बनो तुम।
मानवता की शान बनो तुम।।

विद्या पाकर ज्ञान छुपाना ठीक नहीं, ठीक नहीं।
मानव जीवन व्यर्थ गंवाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।।

बनो सज्जनों, परोपकारी।
राम कृष्ण जैसे बलधारी।।

दुष्टजनों का साथ निभाना ठीक नहीं, ठीक नहीं।
मानव जीवन व्यर्थ गंवाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।।

बनो तपस्वी सच्चे त्यागी।
दयानन्द ऋषि से वैरागी।

ज्ञानी बन पाखंड, बढ़ाना ठीक नहीं, ठीक नहीं।
मानव जीवन व्यर्थ गंवाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।।

अर्जुन जैसे वीर बनो तुम।
वीर शिवा हम्मीर बनो तुम।।

कभी मुसीबत में घबराना ठीक नहीं, ठीक नहीं।
मानव जीवन व्यर्थ गंवाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।।

ईश्वर भक्त महान बनो तुम।
देश भक्त गुणवान बनो तुम।।

विकलांगों की हंसी उड़ाना ठीक नहीं, ठीक नहीं।
मानव जीवन व्यर्थ गंवाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।।

मानव हो, मानवता धारो।
काम, क्रोध, मदलोभ बिसारो।।

सत्संग में, रोड़ा अटकाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।
मानव जीवन व्यर्थ गंवाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।।

'नन्दलाल निर्भय' अब जागो।
द्वेष ईर्ष्या नफरत त्यागो।।

गन्दे गीत बनान, गाना ठीक नहीं, ठीक नहीं।
मानव जीवन व्यर्थ गंवाना, ठीक नहीं, ठीक नहीं।।

आर्य मर्यादा साप्ताहिक पढ़ें और दूसरों को पढ़ाएं तथा लाभ उठाएं।

आर्य समाज पटियाला में ऋग्वेद पारायण महायज्ञ एवं वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न

आर्य समाज मन्दिर, चौंक आर्य समाज, पटियाला द्वारा दिनांक 6 नवंबर से 12 नवंबर 2017 (रविवार तक) बड़ी धूमधाम और हर्षोउल्लास के साथ वेद प्रचार सप्ताह एवं ऋग्वेद पारायण महायज्ञ मनाया गया। इस शुभ अवसर पर मुंबई निवासी आर्य जगत के उच्च कोटी के विद्वान एवं वैदिक प्रवक्ता आचार्य डॉ. सोमदेव जी मुख्य प्रवक्ता के रूप में और मुजफ्फरनगर से भजनोंपदेशक पं. सतीष सुमन जी और ढोलक वादक पं. बृजपाल आर्य जी विशेष रूप से आमंत्रित थे। इस पूरे समारोह में पटियाला और आस पास के कस्बों के आर्य भाई बहनों ने बड़ी संख्या में भाग लिया। समारोह की सूचना के लिए सारे नगर में इश्तिहार बांटे गए, जगह जगह पर बैनर लगवाए गए और मुनादी करवाई गई।

6 नवंबर 2017 दिन सोमवार को प्रात: 7:30 बजे ऋग्वेद पारायण महायज्ञ प्रारम्भ हुआ, जिसकी पूर्णाहुति दिनांक 12 नवंबर 2017 रविवार को सम्पन्न हुई। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य डॉ. सोम देव जी थे। आर्य समाज के बहुत ही विद्वान पूर्व पुरोहित पं. गजेन्द्र शास्त्री जी एवं दीनानगर गुरुकुल के दो वेद पाठी आचार्य जी के सहयोगी थे। प्रात: 7:30 बजे से 9:30 बजे तक यज्ञ और 9:30 बजे से 11:00 बजे तक पं. सतीष सुमन जी के भजन और आचार्य जी के प्रवचन होते रहे। प्रात: काल की बैठक के पश्चात् नित्यप्रति हल्वा, खीर, मीठे चावल एवं फलों का प्रसाद बंटता था और सायंकाल की सभा (6:30 बजे से 9:00 बजे तक) के पश्चात् रोज सभी के लिए ऋषिलंगर का आयोजन किया जाता था। मिष्ठान श्रोताओं द्वारा बांटा जाता था।

आचार्य डॉ. सोम देव जी के प्रवचन मानव जीवन को सही रास्ते पर ले जाने के लिए और देश तथा समाज की अनेकों समस्याओं को सुलझाने के लिए होते थे। पूज्य आचार्य जी ने अपने प्रवचनों में कहा कि वेद ईश्वर का दिया हुआ ज्ञान है और यह संपूर्ण मानवता के कल्याण के लिए है। वेदों के ज्ञान से ही मानव समाज की समस्त समस्याओं का समाधान संभव है। वेद जीवन के सभी उत्तम उद्देश्यों को प्राप्त करने की शक्ति प्रदान करते हैं। आचार्य जी ने आगे बताया कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने भी वेदों की ओर लौटने का संदेश दिया था। पूज्य आचार्य जी ने अपने सम्बोधन में आगे कहा कि महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज के नियमों में लिखा है कि वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। संसार में जहां-जहां सत्य है वह वेद से लिया गया है। उन्होंने जीवन कल्याण के लिए वेदों का स्वाध्याय करने का आहवान किया। उपनिषद के श्लोक सत्यमेव जयते नानृताम हमेशा सत्य की जीत होती है झूठ की नहीं।

आयोजन की सफलता में प्रधान श्री राजकुमार सिंगला जी के अतिरिक्त श्री वीरेन्द्र सिंगला वरिष्ठ उप-प्रधान, कर्नल श्री आनन्द मोहन सेठी उप-प्रधान, श्री वेद प्रकाश तुली मंत्री, श्री जितेन्द्र शर्मा कोषाध्यक्ष, श्री हर्ष वर्धन स्टोर प्रभारी, श्री गुलाब सिंह पुस्तकालयाध्यक्ष, श्री वैज नाथ पाल, सह पुस्तकालयाध्यक्ष, प्रिंसीपल निखिल रंजन शास्त्री उपमंत्री, श्री प्रवीण कुमार उपमंत्री, श्री रमेश चन्द्र गन्डोत्रा, श्री यशपाल जुनेजा, प्रो. विद्या सागर, प्रो. के. के. मोदगिल, डॉ. ओम देव आर्य, स्त्री आर्य समाज की बहनें, आर्य कन्या सीनियर सैकण्डरी स्कूल की प्रिंसीपल और अधियापिकाएं तथा अन्य सभी भाई बहनों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा।

इस महायज्ञ की पूर्णाहुति के दिन आर्य समाज समाना के प्रधान श्री यशपाल सिंगला, श्री सतीष कुमार मंत्री आर्य समाज सनौर, श्री अशोक आर्य प्रधान आर्य समाज राजपुरा टाऊन, श्री लव कुमार, प्रधान आर्य समाज सरहिन्द, नाभा के दोनों आर्य समाजों के पदाधिकारी, बहन सरोज बाला चोपड़ा कोषाध्यक्ष, आर्य समाज सैक्टर 35/43 चंडीगढ़ आदि अपनी-अपनी आर्य समाजों के और पदाधिकारियों और सदस्यों सहित विशेष रूप से पहुंचे।

आर्य समाज की ओर से पूज्य आचार्य जी और पं. सतीष सुमन जी को दोशालों से सम्मानित किया गया। भिन्न-भिन्न आर्य समाजों से पधारे प्रधान/मंत्री आदि को इन विद्वानों और आर्य समाज की कार्यकारिणी के सदस्यों द्वारा दोशालों से सम्मानित किया गया। **-वेद प्रकाश तुली मंत्री**

पृष्ठ 4 का शेष-गीता की...

शिकार हो जाता है..... मीमांसकों ने किसी भी पुस्तक, प्रकरण, लेख, वाक्य अथवा शब्द का अर्थ करने के लिए एक सर्वमान्य कसौटी बनाई है। इस कसौटी के अन्तर्गत छ: साधन बताए गए हैं-उपक्रम, उपसंहार, अभ्यास, अपूर्वता, अर्थवाद और उपपत्ति। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के अनुसार आंकाक्षा, योग्यता, आसत्ति और तात्पर्य, किसी भी ग्रन्थ के सही आशय को समझने के लिए इन चार बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। गीता को समझने के लिए यदि इन बातों को आधार बनाया जाए तो गीता में न तो किसी प्रकार की प्रक्षिप्तता है, न किसी प्रकार का विरोधाभास है, न अवतारवाद है, न वेद व यज्ञ विरूद्धता है, न ही परमात्मा के स्थान पर किसी प्रकार की जड़पूजा का संकेत है और न ही मृतक-श्राद्ध आदि का विधान है....। ग्रन्थ के आशय को समझने में तब कठिनाई पैदा हो जाती है जब पाठक या विवेचन करने वाला, लेखक की आंख से नहीं बल्कि अपनी पूर्वाग्रही आंख से ग्रन्थ को देखने का प्रयास करता है.... गीता के साथ भी लगभग ऐसा ही हुआ है जिससे साधारण पाठक का भ्रमित हो जाना स्वाभाविक है। हमें चाहिए कि हम गीता के मूल भाव को ग्रहण करके तद्नुसार अपने जीवन को सार्थकता प्रदान करें।

गुरुकुल महाविद्यालय शुक्रताल का 53वाँ वार्षिक महोत्सव सम्पन्न

दिनाँक एक से चार नवम्बर 2017 तक गुरुकुल महाविद्यालय शुक्रताल जि०-मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) का 53वाँ वार्षिक महोत्सव बड़ी धूम-धाम के साथ सम्पन्न हुआ। इस शुभावसर पर आचार्य यज्ञवीर जी शास्त्री के ब्रह्मत्व में सामवेद पारायण यज्ञ का आयोजन किया गया। इस महायज्ञ में आचार्य प्रेमशंकर मिश्र आचार्य पवनवीर, स्वामी सत्यवेश, आचार्य रघुबीर-वेदालंकार, स्वामी शिवानन्द, स्वामी आनन्द वेश आदि ने वेद मन्त्रों की व्याख्याएं करके श्रद्धालु यजमानों और श्रोताओं को वेद का सन्देश दिया और यज्ञ करने की प्रतिज्ञाएं करायी।

इस शुभावसर पर राष्ट्र रक्षा सम्मेलन के अध्यक्ष ठाकुर विक्रम सिंह जी ने अपने जोरदार व्यक्तव्य में राष्ट्र रक्षा के लिए आहवान किया और निर्भिकता के साथ कहा कि हमें देश-द्रोहियों से सतर्क रहने की आवश्यकता है जो देश को क्षति पहुँचाते रहते हैं। इन्होंने गुरुकुल के लिए एक दुधारु गाय भी दान की। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के मान्य अध्यक्ष स्वामी आर्यवेश जी की अध्यक्षता में समाज सुधार सम्मेलन सम्पन्न किया गया। इस अवसर पर स्वामी जी महाराज ने कहा कि जब तक वेदों के आधार पर सबको समान शिक्षा नहीं दी जायेगी तब तक देश का विकास नहीं हो सकेगा। उन्होंने बेटी पढ़ाओ, बेटी बचाओं एवं सुरापान निषेध तथा नशाबन्दी आदि के लिए गाँव-गाँव में जनजागरण पर जोर दिया। आचार्य इन्द्रपाल एवं राणा शास्त्री जी की अध्यक्षता में व्यायाम सम्मेलन किया गया, इसमें ब्र. चंकित ने गले से रिया मोड़कर, ब्र. आशु ने जंजीर तोड़कर शक्ति का प्रदर्शन किया, ब्र. सिद्धार्थ ने रस्से पर अनेक चमत्कारी योगासन किये एवं ब्र. गौरवपाल, प्रशान्त व ब्र. कुणाल ने आग के गोले के बीच से कूदकर दर्शकों को चकित कर दिया।

सामवेद पारायण की पूर्णाहुति पर स्वामी आनन्द वेश की प्रेरणा से अनेक श्रद्धालुओं ने बुराइयों को छोड़कर अच्छाईयों को ग्रहण करने की प्रतिज्ञा की। सभी अध्यापकों घनश्याम्, विकास शास्त्री, राणा सिंह एवं अरूण कुमार एवं समिति के अधिकारियों एवं ब्रह्मचारियों का पूर्ण सहयोग रहा। **-स्वामी आनन्द वेश**

पृष्ठ 8 का शेष-आर्य समाज फोकल प्वाइंट...

डॉ. अचला गुप्ता जी, डॉ. सविता नौहरिया जी, श्रीमती एवं श्री भारत रत्न गुप्ता जी और आर्यवीर दल के सदस्यों की विशेष उपस्थिति रही। समापन समारोह में भजन श्री राजेश प्रेमी जी, वीरेन्द्र-धीरेन्द्र, डॉ. सविता उप्पल जी, श्रीमती गुरमीत कौर और श्री पूर्णिमा रहेजा के भजनों का कार्यक्रम और आचार्य डॉ. प्रमोद जी योगार्थी जी के प्रवचन और भजन विशेष रूप से सराहनीय रहे। विभिन्न आर्य समाजों से पधारे हुए सभी अधिकारियों, सदस्यों और दूसरे सभी का धन्यवाद करके शान्ति पाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ। अंत में ऋषि लंगर वितरित किया गया। **महेन्द्र प्रताप आर्य मन्त्री**

आर्य समाज मन्दिर माडल टाऊन जालन्धर का 68वां वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्य समाज मन्दिर, माडल टाऊन, जालन्धर के वार्षिकोत्सव पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री सुदर्शन शर्मा जी एवं श्रीमती गुलशन शर्मा जी को सम्मानित करते हुये आर्य समाज के प्रधान श्री अरविन्द घई जी, मंत्री श्री अजय महाजन, स्त्री आर्य समाज के प्रधाना श्रीमती सुशीला भगत, श्रीमती रश्मि घई एवं अन्य। चित्र दो में उपस्थित जनसमूह।

आर्य समाज मन्दिर, माडल टाऊन, जालन्धर का 68वां वार्षिकोत्सव 13 नवम्बर से 19 नवम्बर 2017 तक बड़ी धूमधाम से मनाया गया। यजुर्वेद पारायण यज्ञ पं. सत्यप्रकाश शास्त्री, पं. बुद्धदेव वेदालंकार के पौरहित्य में सम्पन्न हुआ। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य विष्णु मित्र वेदार्थी जी के सान्निध्य में यह उत्सव बड़े ही हर्षोल्लास के साथ प्रारम्भ हुआ। इससे पूर्व 12 नवम्बर को प्रात: 5:30 बजे विशाल प्रभातफेरी का कार्यक्रम शोभायात्रा के रूप में निकाली गई। 4 ट्रालियों में भजन, कीर्तन, यज्ञ व ओ३म् के जयकारों से आकाश गूंज रहा था। जगह-जगह पर बिस्कुट, जूस, फल, चाये दूध पिलाया जा रहा था एवं पुष्पवर्षा से स्वागत कर रहे थे। शहर के भिन्न-भिन्न समाजों से बहुत सारे श्रद्धालु इसमें सम्मिलित हुए। स्थानीय पार्षद श्रीमती अरूणा अरोड़ा जी भी इसमें शामिल हुई। बिजनौर से पधारे आचार्य विष्णु मित्र वेदार्थी जी ने सात दिवसीय प्रवचन के सारांश के रूप में पूजा पद्धति पर चर्चा करते हुए कहा कि पूजा सांसारिक व्यवहार व आध्यात्मिक आंगन में होती है। सांसारिक व्यवहार की पूजा में पुज्य, पूजक व पूजा की सामग्री ये तीनों विद्यमान रहते हैं। इसमें माता पिता गुरू आचार्य पूजनीय कहलाते हैं। यह पूजा संसार में जिन पदार्थ से की जाती है उन पदार्थ को पूजा की सामग्री कहते हैं। पूजा के सामग्री के यह पदार्थ माता पिता व आचार्य आदि देवों की आवश्यकता के अनुसार भोजन जल वस्त्र व सेवा आदि होते हैं। इस सांसारिक व्यवहार की पूजा से अलग आध्यात्मिक जगत में परमेश्वर ही एकमात्र उपासना के योग्य देव है तथा मनुष्य मात्र उपासक हैं। इसमें परमेश्वर की उपासना कोई वस्तु देकर नहीं होती है अपितु उसकी पूजा उससे ज्ञान व आनन्द आदि वस्तुयें लेकर होती है।

उन्होंने कहा की परमेश्वर को कोई वस्तु अप्राप्त नहीं है तथा पूर्ण आनन्द युक्त भी है। इसलिये उसे किसी पदार्थ की आवश्यकता नहीं है। अत: परमेश्वर के लिये किन्हीं भौतिक वस्तुओं का चढ़ावा न चढ़ाकर उससे ज्ञान व आनन्द आदि को प्राप्त करने के लिये उसकी स्तुति, प्रार्थना व उपासना करनी चाहिये। ऐसा करने से हमारी सांसारिक आवश्यकताओं की पूर्ति व सर्वोत्तम धन मोक्षानन्द प्राप्त होता है। दिल्ली से पधारे पं. देव आर्य जी ने सातों दिन हृदयग्राही मनमोहक सिद्धान्तिक भजन सुनाकर सब को मोहित कर दिया। 18 नवम्बर शनिवार सायं पूर्व प्रधान स्वर्गीय श्री विजय सेठी जी की मधुर स्मृति में उनकी धर्मपत्नी श्रीमती कमलेश सेठी जी एवं परिवार द्वारा भजन सन्ध्या का विशाल आयोजन किया गया। जिसमें अमृतसर एवं जालन्धर के बहुत सारे भजनोपदेशकों ने प्रेरणादायक भजन प्रस्तुत करके स्वर्गीय सेठी जी को श्रद्धान्जलि अर्पित की। परिवार की ओर से प्रीति भोज करवाया गया। 19 नवम्बर रविवार पूर्णाहुति के पावन अवसर पर 51 कुण्डीय यज्ञ में यजुर्वेद पारायण यज्ञ की पूर्णाहुति डाली गई।

कार्यक्रम के अध्यक्ष श्री सुदर्शन शर्मा जी, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (एम. डी. एच. आर. इन्टरनैशनल ग्रुप और इंडस्ट्रीज) एवं मुख्य अतिथि श्रीमती विजय चोपड़ा जी को सरोपा, मोमैन्टो फूलमाला से सम्मानित किया गया। मन्त्री अजय महाजन जी ने वार्षिक रिपोर्ट पढ़ कर सुनाई। कुछ सदस्यों को विशेष सेवाओं के लिये सम्मान चिन्हों से सम्मानित किया गया। इनमें प्रमुख पार्षद माडल टाऊन श्रीमती अरुणा अरोड़ा, श्रीमती सुशीला बत्रा, श्रीमती सुशील खरबन्दा, श्री राजेन्द्र विज, श्रीमती प्रभा विज, श्री कुन्दनलाल अग्रवाल, श्री असोक बत्रा, श्री श्याम सुन्दर धवन, प्रि. सोमदत्त भगत, प्रिं. गोस्वामी, श्री वी आर गुप्ता आदि।अध्यक्षीय भाषण में श्री सुदर्शन शर्मा जी ने सम्पूर्ण संसार को आर्य बनाने का तरीका बताया। फिर उन्होंने कहा आर्य शब्द जातिवाचक नहीं अपितु गुणवाचक है। स्टेज का संचालन मन्त्री श्री अजय महाजन एवं श्रीमती रश्मि घई जी ने किया। प्रधान जी ने सभी संन्यासियों, विद्वानों एवं उपस्थित महानुभावों का धन्यवाद किया। शान्तिपाठ एवं ऋषि लंगर के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हो गया।

आर्य समाज फोकल प्वाईंट, लुधियाना का वार्षिक उत्सव सम्पन्न

आर्य समाज फोकल प्वाईंट, लुधियाना का 39वां वार्षिक उत्सव 17 से 19 नवम्बर 2017 तक परमपिता परमात्मा की असीम कृपा, आशीर्वाद, सभी अधिकारियों, सदस्यों के तन-मन-धन से सहयोग के साथ हर्षोल्लास, श्रद्धा एवम् समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ। सारा कार्यक्रम यज्ञ के ब्रह्मा पुरोहित श्री महेश वाचस्पति जी के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ। दिनांक 17-18 नवम्बर को प्रात: काल यज्ञ-भजन एवं प्रवचन का कार्यक्रम आचार्य डॉ. प्रमोद जी योगार्थी प्राचार्य दयानन्द ब्रह्म महाविद्यालय हिसार जी के प्रवचन और भजनोपदेशक श्री राजेश अमर प्रेमी जी जालन्धर, वीरेन्द्र धीरेन्द्र, श्रीमती किरण शुक्ला जी के भजनों से सम्पन्न हुआ। 18 नवम्बर शनिवार को सायंकाल भजन सन्ध्या का कार्यक्रम विशेष रूप से सफल रहा जिसमें दयानन्द आदर्श विद्यालय जीवन नगर, लुधियाना के बच्चों ने भी भाग लिया। समापन समारोह 19 नवम्बर रविवार को प्रात: हवन यज्ञ के साथ श्री महेश वाचस्पति जी के ब्रह्मत्व में प्रारम्भ हुआ। 15 हवन कुंड़ों पर लगभग 30-35 परिवारों ने यज्ञ अग्नि में घी और समिधा की आहूतियां समर्पित कर आचार्य डॉ प्रमोद रूप से सम्पन्न किया। ध्वज गीत श्री राजेश अमर प्रेमी जी ने बड़े मधुर स्वर में हारमोनियम पर गाया। तबले पर संगत श्री रवि जी ने की। ज्योति प्रजवल्लन: श्रीमती रमा एवं श्री सुरेश मुन्जाल जी उद्योगपति, श्रीमती एवं श्री बाई. पी. रिशि जी, उद्योगपति एवम् श्री राकेश जिन्दल जी उद्योगपति जी ने सामूहिक रूप से ज्योति प्रजवल्लित की। शनिवार 18 नवम्बर को सांयकाल भजन सन्ध्या में ज्योति प्रज्जवल श्रीमती राजरानी एवं श्री रोहताश गर्ग जी और श्रीमती नम्रता एवं श्री लखवीर सूद जी शिवपुरी (मध्य प्रदेश) ने की।

आर्य समाज फोकल प्वायंट लुधियाना के वार्षिक उत्सव पर ध्वजारोहण करते हुए सभा की उप प्रधाना श्रीमती राजेश शर्मा जी, उद्योगपति श्री सुरेश मुंजाल जी एवं अन्य।

योगार्थी और यज्ञ ब्रह्मा पंडित महेश वाचस्पति जी से आशीर्वाद लिया। यजमान परिवारों में अधिकतर परिवार आर्य समाज से अनजान पौराणिक परिवारों से सम्बन्धित थे। प्रात: राश के बाद ध्वजारोहण जिला आर्य सभा की प्रधाना श्रीमती राजेश शर्मा जी, श्री श्रवण बत्रा जी और श्रीमति रमा एवं श्री सुरेश मुन्जाल जी उद्योगपति ने सामूहिक

सम्मान कार्यक्रम: इस अवसर पर पीढ़ी दर पीढ़ी आर्य समाज से जुड़े स्वर्गीय महान ज्ञान चन्द जी के परिवार से श्री श्रवण बत्रा जी, श्री अजय बत्रा जी और श्री राजेन्द्र बत्रा जी और महाश्य मदन-मोहन चड्ढा जी के परिवार से श्री सुरेश चढ्ढा जी और श्री संजीव चड्ढा जी के परिवार के सभी सदस्यों को सम्मानित किया गया। दोनों ही परिवार चार पीढ़ियों से आर्य समाज से जुड़े हुए हैं।

समापन समारोह में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से श्री सुरेश कुमार शास्त्री जी, आर्य कालेज लुधियाना से प्रधानाचार्य डॉ. श्रीमती सविता उप्पल जी, डॉ. विजय सरीन जी, पुरोहित सभा से श्री बाल कृष्ण शास्त्री जी, श्री योगराज शास्त्री जी, श्री अर्जुनदेव शास्त्री जी, श्री अजय बत्रा जी, कैप्टन विजय स्याल जी, डॉ. मोहन गुप्ता जी,

(शेष पृष्ठ सात पर)

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।